छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण औषधीय पौधे

Important Medicinal Plants of Chhattisgarh

GAJENDRA KUMAR VERMA

CASFOS
सत्यमेव जयते
COIMBATORE

CENTRAL ACADEMY FOR STATE FOREST SERVICE
COIMBATORE

2025

छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण औषधीय पौधे
Important Medicinal Plants of Chhattisgarh

Gajendra Kumar Verma

CENTRAL ACADEMY FOR STATE FOREST SERVICE
COIMBATORE

2025

FOREWORD

The book " छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण औषधीय पौधे " is a remarkable and timely contribution toward documenting the state's vast medicinal plant diversity. It skillfully integrates traditional wisdom with scientific principles, showcasing a deep respect for nature and the invaluable role of indigenous knowledge in sustainable resource management.

By presenting detailed information on plant identification, uses, and eco-friendly harvesting techniques, the author provides an excellent reference for students, researchers, forest officers, and practitioners involved in conservation and livelihood promotion. The inclusion of cultivation practices further enhances its practical utility, bridging the gap between community-based knowledge and modern scientific understanding.

I appreciate the author's sincere efforts and commitment to promoting biodiversity conservation and sustainable forest management. This book will certainly encourage readers to appreciate our traditional heritage and contribute to preserving Chhattisgarh's rich natural wealth for future generations.

V. Thirunavukarasu, IFS
APCCF & Principal,
CASFOS, Coimbatore

PREFACE

The book titled " छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण औषधीय पौधे" represents a sincere attempt to document and interpret the rich medicinal plant heritage of the state of Chhattisgarh. It brings together traditional ethnobotanical knowledge and modern scientific insights, offering a holistic understanding of the medicinal flora that supports both human well-being and ecological balance.

For generations, forest-dependent communities have relied on plants not merely for healing but as an integral part of their social, cultural, and spiritual life. This work highlights those deep-rooted connections while also presenting botanical descriptions, pharmacological importance, and sustainable methods of harvesting and cultivation.

The book aims to bridge the gap between folk traditions and scientific research, emphasizing that both perspectives are vital for the sustainable management and conservation of forest biodiversity. It is hoped that this compilation will serve as a valuable reference for students, researchers, professionals, and nature enthusiasts, inspiring greater awareness and responsible use of our natural resources.

I express my heartfelt gratitude to my mentors, colleagues, friends, and family members for their invaluable support, constant encouragement, and inspiration throughout the preparation of this work.

Gajendra Kumar Verma
Assistant Conservator of Forests

ACKNOWLEDGEMENT

The completion of this book, "" **छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण औषधीय पौधे** ""' would not have been possible without the guidance, cooperation, and goodwill of many individuals and institutions.

I express my deep sense of gratitude to Shri. V. Thirunavukarasu, IFS, Principal, CASFOS, Shri Dr C. Vidhyasagar, IFS, Course Director, other faculty members, editorial board members and staff members of CASFOS, Coimbatore and the senior officers of the Forest Department for their continuous encouragement and valuable suggestions during the course of this work. I am especially thankful to the traditional healers, herbal practitioners, and local forest communities of Chhattisgarh, whose traditional wisdom and practical experience formed the foundation of this compilation.

I also wish to extend my sincere thanks to my colleagues and friends for their technical support, constructive feedback, and assistance in data collection and verification. Above all, I am indebted to my family for their patience, moral support, and unwavering motivation, which provided the strength to complete this book.

To everyone who contributed in any manner, I express my heartfelt appreciation and gratitude.

Gajendra Kumar Verma
Assistant Conservator of Forests

CONTENT

छत्तीसगढ़ के महत्वपूर्ण औषधीय पौधों की पहचान, उपयोग, विनाश विहीन विदोहन एवं कृषिकरण की जानकारी

S.No.	Particulars	Page No
1.	भुंई आंवला – *(Phyllanthus nirur)*	1
2.	अर्जुन – *(Terminalia arjuna)*	3
३.	अडूसा – *(Adhatoda zeylanica)*	5
4.	अकरकरा – *(Anacyclus pyrethrum DC)*	7
5.	घृतकुमारी – *(Aloe vera)*	9
6.	आंवला – *(Phyllanthus emblica)*	11
7.	एरंड – *(Ricinus communis)*	13
8.	अश्वगंधा – *(Withania somnifera)*	15
9.	बच – *(Acorus calamus)*	17
10.	बहेड़ा – *(Terminalia bellirica)*	19
11.	भृंगराज – *(Eclipta prostrate)*	21
12.	ब्राह्मी – *(Bacopa monnieri)*	23
13.	धतूरा – *(Datura metel)*	25
14.	गिलोय – *(Tinospora cordifolia)*	27
15.	गुड़मार – *(Gymnema sylvestre)*	29
16.	हर्रा – *(Terminalia chebula)*	31
17.	कलिहारी – *(Gloriosa superb)*	33
18.	केंवाच – *(Mucuna pruriens)*	35
19.	मेहंदी – *(Lawsonia inermis)*	37
20.	नागरमोथा – *(Cyperus rotundus)*	39
21.	तुलसी – *(Ocimum sanctum)*	41

हर्बल स्टेट ऑफ छत्तीसगढ़
Herbal State of Chhattisgarh

भुंई आंवला
Phyllanthus niruri
गुणकारी औषधीय पौधा

इसे विभिन्न स्थानीय नामों से जाना जाता है जैसे जंगली आँवला, भूम्यामलकी, झरनटी, और जरनटी। यह पौधा शारीरिक दुर्बलता, लीवर संबंधी रोगों, पीलिया और पथरी जैसे रोगों में अत्यंत लाभकारी होता है। यह छत्तीसगढ़ के जंगलों, खेतों की मेड़, खुली जमीन और ऊसर भूमि में प्राकृतिक रूप से वर्षा ऋतु में उगता है।

कृषिकरण

भुई आंवला एक एकवर्षीय, नर्म तथा 15–50 सेमी ऊँचाई वाला पौधा होता है। इसकी शाखाएँ पतली, कोमल और नीचे झुकी हुई होती हैं। इसकी पत्तियाँ आमतौर पर आँवला के पत्तों जैसी होती हैं, इसलिए इसे भुंई आंवला कहा जाता है। इसके तनों के नीचे की ओर छोटे–छोटे हरे रंग के फल लगते हैं जो आँवला जैसे दिखते हैं लेकिन आकार में बहुत छोटे होते हैं। फूल बहुत छोटे, हरे–पीले रंग के होते हैं और वर्षा ऋतु में जुलाई–अगस्त में दिखाई देते हैं। फल अगस्त–सितम्बर में परिपक्व होते हैं।

भुंई आंवला का कृषिकरण भी किया जा सकता है। बीज के माध्यम से इसका प्रसारण किया जाता है। वर्षा ऋतु प्रारंभ होने से पहले मई–जून में खेत की अच्छी तरह जुताई कर ली जाती है। मिट्टी भुरभुरी होनी चाहिए। प्रति एकड़ 3 से 4 किग्रा बीज पर्याप्त होता है। बीज को छांव में सुखाकर सीधे खेत में बिछाया जाता है। यह पौधा कम पानी, कम उपजाऊ मिट्टी में भी आसानी से उगता है। इसमें सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं होती।

विनाश विहिन विदोहन

भुंई आंवला की पत्तियाँ, फल और पूरा पौधा औषधीय रूप से उपयोगी होता है। फूल और फल आने के बाद पौधे को पूरा उखाड़कर छांव में सुखा लिया जाता है। फसल को सावधानी से काटकर, पौधे के मूल भाग को भी सुरक्षित रखते हुए संग्रहण करना चाहिए ताकि बीज गिरकर पुनः अंकुरण हो सके।

उपयोग

★ भुंई आंवला की ताजी पत्तियों का रस 10–15 मिली मात्रा में दिन में दो बार लेने से पीलिया में लाभ होता है।

★ इसका चूर्ण अथवा रस लीवर की कार्यक्षमता बढ़ाने में सहायक होता है।

★ इसके काढ़े का नियमित सेवन पथरी को गलाकर बाहर निकालने में सहायक होता है।

★ इसकी पत्तियाँ एवं फल गैस, अपच, कब्ज और पेट के कीड़ों में लाभकारी हैं।

★ इसका सेवन रक्त में शर्करा की मात्रा को नियंत्रित करने में सहायक माना गया है।

★ भुंई आंवला को पीसकर लेप लगाने से चर्म रोगों में राहत मिलती है।

अर्जुन
Terminalia arjuna
गुणकारी औषधीय वृक्ष

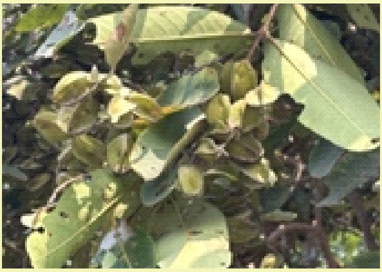

अर्जुन एक महत्वपूर्ण औषधीय वृक्ष है, जिसे आयुर्वेद में हृदय रोगों की अमोघ औषधि माना गया है। इसे (धवल वृक्ष) या नदी किनारे का प्रहरी भी कहा जाता है, क्योंकि यह सामान्यतः नदियों, तालाबों एवं नमी वाली भूमि के किनारे पाया जाता है।

कृषिकरण

अर्जुन एक मध्यम से बड़े आकार का पर्णपाती वृक्ष होता है, जिसकी ऊँचाई 20–30 मीटर तक होती है। इसकी छाल मोटी, सफेद–भूरी रंग की होती है, जो परतदार रूप में उतरती है। इसकी पत्तियाँ साधारण, अंडाकार और चमकीली होती हैं। फूल छोटे, हरे–सफेद रंग के होते हैं जो मार्च से जून के बीच आते हैं। फल पंखदार, 5 खंडों वाले, भूरे रंग के होते हैं जो शरद ऋतु में पकते हैं।

अर्जुन का कृषिकरण बीज अथवा कटिंग से किया जा सकता है। बीजों को गर्मियों में एकत्र कर जून–जुलाई में बोया जाता है। पौधों को नर्सरी में तैयार कर जुलाई–अगस्त में मुख्य खेत में 5×5 मीटर की दूरी पर रोपित किया जाता है। अर्जुन जलभराव से युक्त उपजाऊ, दोमट या काली मिट्टी में अच्छी तरह उगता है। एक बार रोपण के बाद यह वृक्ष 50 वर्षों या उससे अधिक तक उपयोगी रहता है।

विनाश विहिन विदोहन

अर्जुन की छाल औषधीय होती है, अतः वृक्ष को नष्ट किए बिना छाल की

परतों को सावधानीपूर्वक निकाला जाता है। एक वृक्ष से साल में 1 से 2 बार ही छाल ली जाती है। छाल संग्रह के बाद छांव में सुखाकर चूर्ण या काढ़ा बनाया जाता है।

उपयोग

★ अर्जुन की छाल का काढ़ा या चूर्ण हृदय की मांसपेशियों को मजबूत करता है और ब्लड प्रेशर को नियंत्रित करता है।

★ अर्जुन छाल का पाउडर दूध के साथ लेने से लाभ होता है।

★ अर्जुन में कैल्शियम एवं खनिज तत्व पाए जाते हैं, जिससे यह हड्डियों के लिए भी उपयोगी है।

★ अर्जुन की छाल का काढ़ा मूत्र मार्ग संक्रमण में लाभकारी होता है।

★ इसकी छाल का चूर्ण घावों पर छिड़कने से रक्तस्राव रुकता है और घाव जल्दी भरता है।

★ अर्जुन की छाल अन्य जड़ी–बूटियों के साथ मिलाकर मधुमेह में भी उपयोग की जाती है।

अडूसा
Adhatoda zeylanica
गुणकारी औषधीय पौधा

अडूसा एक छोटी सदाबहार है जो पूरे भारत के मैदानी क्षेत्रों में पाया जाता है। गर्म जलवायु के कारण देश में इसकी दो प्रजातियां ही उपलब्ध है। इसके पत्तों व जड़ का औषधीय उपयोग किया जाता है।

अडूसा झाड़ीदार, समूहजात पौधा है जो 4–8 फीट ऊंचा होता है। इसके पत्ते 3–8 इंच लंबे रोमयुक्त, दुर्गन्धयुक्त अंडाकार होते है। अडूसा के फूल 1 से 3 इंच लंबे, सफेद व अनेक मंजरियों में होते हैं। अडूसा की फलियां 3–4 इंच लंबी, रोमयुक्त होती है जिसमे 4 बीज होते है। बीज छोटे चिकने होते हैं।

कृषिकरण

अडूसा का प्रवर्धन बीज व कटिंग के माध्यम से किया जा सकता है। दोनों ही परिस्थितियों में सर्वप्रथम पौधों को पॉलीबैग्स में विकसित करते है। पॉलीबैग्स में दो भाग काली मिट्टी, एक भाग रेत, एक भाग गोबर का खाद मिलाना जरूरी है। जब पौधे डेढ़ माह के हो जाए तो विधिवत इसका रोपण कर देना चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30–45 से. मी. पर लगाया जाता है। छह से सात माह में लगभग 2 से 2.5 इंच ऊंचाई के पौधे तैयार हो जाते है। यह पौधा किसी भी प्रकार की भूमि में पैदा हो जाता है।

पौधे के पत्तों व जड़ की उपयोगिता के कारण ही इसका संग्रहण किया जाता है। पत्तों का संग्रहण छह माह की आयु से तोड़कर व सुखाकर किया जाता है। लगभग एक वर्ष के पौधे को जड़ सहित हल्का पानी देने के साथ ही उखाड़ लिया

जाता है। पत्तों को तोड़ने के उपरांत जड़ कालर से 1 इंच ऊपर काटकर जड़ व छाल को संग्रहित किया जाता है। सूखे छोटे–छोटे टुकड़ों को खाली बोरों में भरकर पैक कर लिया जाता है।

विनाश विहिन विदोहन

पत्तियों का संग्रहण पुष्प आने के बाद ही करें क्योंकि इसी समय औषधीय रसायन अधिक मात्रा में पाए जाते है।

उपयोग

- ★ अस्थमा में अडूसा के पत्तों का रस आधा चम्मच दिन में दो बार एक से तीन महीने तक लेने से लाभ होता हैं।
- ★ अडूसा के पत्तों का रस एक चौथाई कप दिन में दो बार लेने से पीलिया में राहत देता हैं।
- ★ बच्चों को काली खांसी में अडूसा के पत्तों का जला भस्म एक से तीन रत्ती शहद के साथ दिन में तीन बार लेने से फायदा होता है।
- ★ अडूसा छाल का चूर्ण 10 से 20 ग्राम की मात्रा में लेने से कफ में राहत देता हैं।

अकरकरा
Anacyclus pyrethrum DC
गुणकारी औषधीय पौधा

अकरकरा एक या दो वर्षीय पौधा है। आमतौर पर यह खेतों में खरपतवार के रूप में होता हैं। प्राकृतिक रूप से अकरकरा नदी–नालों के किनारे गीली दलदली जगहों में पाया जाता हैं। अकरकरा का पौधा झाड़ीदार लाल हरे रंग का 30 से 40 से. मी. ऊँचा होता है। इसके पत्ते थोड़े मुड़े होते हैं। अकरकरा का तना रोएदार ग्रंथियुक्त होता है। इसमे छोटे–छोटे पीले रंग के फूल खिलते हैं। अकरकरा की जड़ 8 से 10 से.मी. लंबी और लगभग 1.5 से. मी. चौड़ी तथा मजबूत और मटमैली होती हैं।

कृषिकरण

अकरकरा की अनेक प्रजातियां होती है। ब्राजीलियन केस जो बगीचों में लगाई जाती है सर्वश्रेष्ठ होती है। इसकी खेती के लिए आर्द्र व नमीयुक्त जलवायु श्रेष्ठ है। इसे 14–40 से. तापमान व 70–260 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले स्थानों पर सुगमतापूर्वक उगाया जा सकता है। उत्तम जल निकास वाली, सामान्य पी.एच. मान वाली सभी प्रकार की भूमि में इसकी फसल उगाई जा सकती है। इसके खेत में पानी नहीं भरना चाहिए पर खेत में नमी बनी रहनी चाहिए। गर्मी में खेत की गहरी जुताई करे अीर वर्षा आने पर खेत को दो–तीन बार हल चलाकर समतल करे। खेत में सुविधानुसार क्यारियां बनाये। एक एकड़ क्षेत्र के लिए लगभग 250 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बीज को मई–जून में क्यारी में बुआई कर पौध । तैयार करे। जब 6–7 पत्ते हो तब जुलाई–अगस्त में खेत में रोपाई करनी चाहिए। इसमे गोबर की खाद डालना चाहिए। इसके पौधे छोटे होते है जो कि खरपतवार से स्पर्धा नहीं कर पाते। इसलिए बोने के 25–30 दिन बाद निंदाई करनी चाहिए। वर्षा में

आवश्यकतानुसार एवं शीत में 25–30 दिन के अंतर से व गर्मी में 15–20 दिन के बाद पानी देना चाहिए। इसकी खेती नमीयुक्त भूमि में की जाती है। अतः खेत में नमी बनी रहे। इसकी फसल में रोगों व कीटों का प्रकोप कम होता है। बोने के 4 माह बाद से इसमे फूल आना शुरू हो जाते है जिन्हे 10 दिन के अंतर से तोड़यें जावे एवं सुखाकर भंडारित करते जायें। पौधों के सूखने पर उन्हें काटकर छाया में सुखाकर बोरियों में भंडारण करना चाहिए। जड़ों को खोदकर अलग से सुखाकर भंडारण करे। सिंचित फसल से 2 प्रति एकड़ सूखे फूल, 5 क्विंटल सूखी पत्ती व तना एवं 50 किलो सूखी जड़े प्राप्त होती है।

विनाश विहिन विदोहन

10 प्रतिशत पुष्प कलिकाओं को छोड़कर शेष कलिकाओं का संग्रहण करें। पुष्प गहरे पीले रंग के हो जाए तब इसका संग्रहण करें।

उपयोग

★ अकरकरा का 100 मिलीलीटर का काढ़ा बनाकर सुबह–शाम पीने से पुरानी खांसी में आराम मिलता है।

★ अकरकरा की सूखी डंडी महुए के तेल में मिलाकर मालिश से लकवा में लाभकारी सिद्ध होता है।

★ अकरकरा के पत्तों का रस श्वेत कुष्ठ पर लगाने से लाभ मिलता है।

घृतकुमारी
Aloe vera
गुणकारी औषधीय पौधा

घृतकुमारी को क्वारपा एवं ग्वारपाठा के नाम से भी जाना जाता है। इसका अंग्रेजी नाम एलोवेरा ही प्रचलन में हैं। यह एक बहुवर्षीय पौधा हैं। इसमें पत्ते ही पत्ते होते है जो मोटे गुदायुक्त एवं लंबे होते हैं। पत्ते के दोनों तरफ मुड़े हुए छोटे–छोटे काँटे होते हैं। काँटों के बीच में घी की भांति चिकना गुदा तने के रूप में होता है। यदि इसके गुदे को धूप में रख दिया जाए तो उसका रंग पीला पड़ जाता हैं।

कृषिकरण

इसकी खेती रेतीली पथरीली, बलुई, दोमट मिट्टी में की जा सकती है। यह असिंचित व सिंचित दोनों क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। पड़ती भूमि विकास हेतु यह बहुत उपगोगी पौधा है। ग्रीष्मकाल में खेत की गहरी जुताई करने के बाद वर्षा प्रारंभ होने पर खेत में 2–3 बार हल चलाकर खेत को समतल बनाये तथा जल निकास हेतु खेत में निकास नालियां बनायें, ये नालियां सिंचाई हेतु उपयोग करे। ग्रीष्मकाल में रोपने हेतु 20x20x20 से.मी. के गड्ढे 50x50 से.मी. के अंतर से खोदें व उनमें गोबर की खाद भर दें।

इसके पौधे के आधार से सकर्स निकलते है जो एक छोटे पौधे का रूप ले लेते हैं। इन्हीं पौधों को निकालकर दूसरे स्थान पर रोपित करते है। असिंचित दशा में जून से जुलाई में वर्षा प्रारंभ होने पर या वर्षा की समाप्ति पर सिंचित क्षेत्र में कभी भी इसकी रोपाई की जा सकती है। 50 से.मी. कतार से कतार की दूरी व पौधे से पौधे की दूरी भी 50 से.मी. रखते है। अतः प्रति हेक्टेयर 60,000 से 65,000 सकर्स रोपित किया जाना चाहिए।

रोपण के बाद आवश्यकतानुसार हाथ से कतारों के बीच निंदाई करें। सिंचाई करने से उपज में वृद्धि होती है व नीचे की पत्तियां सूखती नहीं है। यह फसल असिंचित क्षेत्र में भी होती है परंतु उपज सिंचित की तुलना में बहुत कम होती है। तीन माह बाद तथा उसके उपरांत आवश्यकतानुसार पौधों के तनों के पास मिट्टी चढ़ाना आवश्यक है, नहीं तो पौधे एक तरफ लटक जायेंगे। परिपक्व पत्तियां वर्ष में कभी भी काटी जा सकती है। फिर भी दो वर्ष पुरानी पत्तियों की कटाई करना उचित है क्योंकि उनकी औषधीय गुणवत्ता अधिक होती है। नीचे की पत्तियां चाकू या हसिये से तने के पास से काटी जाती है। काटने के बाद हरी पत्तियां प्रसंस्करण फैक्टरियों में भेजते है।

विनाश विहिन विदोहन

परिपक्व व पीले गूदेदार पत्तियों का संग्रहण करे तथा छोटे पौधों को पुनरुत्पादन हेतु छोड़ दे।

उपयोग

★ पुराने अल्सर और चर्म रोगों में घृतकुमारी के गुदे में थोड़ी सी हल्दी मिलाकर लगाने से लाभ होता हैं।

★ जलने, कटने पर ऐलोवेरा की पत्तियों का गुदा लगाया जाता है जो तत्काल राहत देता है तथा उस स्थान पर जलने का निशान नहीं बनता हैं।

★ घृतकुमारी के गुदे को थोड़ी सी हल्दी मिलाकर आँखों पर बांधने से नेत्र पीड़ा शांत होती है।

★ इसके सेवन से दस्त खुलकर आते है, भूख लगती है, खाना ठीक से पचता है।

आंवला
Phyllanthus emblica
गुणकारी औषधीय पौधा

आंवला एक बहुउपयोगी औषधीय वृक्ष है। आंवला फलों में सर्वश्रेष्ठ है, इसलिए इसे आयुर्वेद में सर्वाधिक उपयोगी रसायन माना गया हैं। आंवला च्यवनप्राश अवलेह एवं त्रिफला चूर्ण का मुख्य घटक भी है।

आंवले का वृक्ष मध्यम ऊंचाई का होता है। आंवला के पत्ते इमली के पत्ती जैसे आयताकार होते है। इसके फूल हल्के पीले रंग के गुच्छों में होते है। आंवले का फल 1.5 से 2.5 से.मी. के गोल हरे रंग के होते है जो पकने पर पीले रंग के हो जाते है। फल के ऊपर 6 रेखाएं होती है। इसके फूल फरवरी–मई में लगते है एवं फल अक्टूबर से अप्रैल माह तक मिलता है।

कृषिकरण

ऊसर, बंजर, अनुपजाऊ, असिंचित भूमि तथा 7 से 9.5 पी.एच. मान तक की भूमि आंवला खेती हेतु उपयुक्त है। शुष्क क्षेत्र का वृक्ष होने के कारण सिंचाई की आवश्यकता कम रहती है। पीतवर्ण के पुष्प आने की स्थिति में खेत में सिंचाई नहीं करनी चाहिए। मई–जून में प्रत्येक 10 से 15 दिन में सिंचाई उत्तम रहती हैं। सामान्यतया 20 दिन में सिंचाई करनी चाहिए। प्रत्येक पेड़ में 10 किलो गोबर की सड़ी खाद फरवरी माह में गुड़ाई के पश्चात् भूमि में नमी होने पर डालनी चाहिए। खाद में जैविक खाद का उपयोग करना चाहिए। खाद दूसरे वर्ष से आगामी 10 वर्षों तक वर्ष में एक बार दिया जाना चाहिए।

पौधे लगाने से पूर्व गड्ढे खोदकर प्रत्येक पौधे के गड्ढ़े के लिए 40 किलो सड़े गोबर की खाद को मिट्टी में मिलाकर डालना चाहिए। गड्ढ़े की गहराई दो से ढाई फीट होनी चाहिए। चौथे वर्ष से एक वृक्ष से लगभग 8 से 10 कि.ग्रा. प्रति वर्ष फलों की प्राप्ति होती है। 8 से 9 वर्ष से प्रत्येक वृक्ष से प्रतिवर्ष फलों की मात्रा बढ़ जाती है। प्रत्येक वर्ष में एक विव आँवला एक वृक्ष से प्राप्त होता है। यदि जमीन की उर्वरा शक्ति है तो 2 से 2.5 विंवटल आँवला फल का उत्पादन प्रतिवर्ष सम्भव है। आँवला का वृक्ष चौथे वर्ष से फल देता है।

विनाश विहिन विदोहन

वनों से संग्रहण करते समय दिसम्बर–जनवरी माह में जब फल पीले रंग के हो जाये तब 10 प्रतिशत फलों को छोड़ शेष फल का संग्रहण करना चाहिए। फलों को बाँस में हुक फंसाकर तोड़ना चाहिए ।

उपयोग

★ रोज सुबह खाली पेट एक सूखे आंवला के सेवन से बुढ़ापा मनुष्य पर अपना प्रभाव नहीं डाल पाता है व शरीर निरोगी रहता है।

★ 3 ग्राम आंवला चूर्ण दिन में 3 बार दिए जाने पर पेट में जलन, गैस के कारण होने वाली अन्य तकलीफों को जल्द दूर कर देती है।

★ आंवला का मुरब्बा अम्लपित तथा चक्कर में लाभकारी है।

★ आंवले के सूखे फल को पानी में भिगोकर उसे पीसकर लेप करने से गर्मी शांत होती है।

एरंड
Ricinus communis
गुणकारी औषधीय पौधा

एरंड का पौधा प्राकृतिक रूप से पूरे छत्तीसगढ़ में पाया जाता है। इसे कैस्टर, अरण्डी व गन्धर्वहस्त जैसे अन्य नाम से भी जानते है। एरंड लाल व सफेद रंग के दो प्रकार के होते है। एरंड का पौधा 2.4 से 4.5 मीटर होता है। एरंड का तना हरा और चिकना तथा छोटी–छोटी शाखाओं से युक्त होता है। एरंड के पत्ते हरे, खंडित, अंगुलियों के समान 5 से 11 खंडों में विभाजित होते है। इसके फूल लाल व बैंगनी रंग के 30 से 60 से.मी. लंबे पुष्प दंड पर लगते है। इसके फल बैंगनी–लाल रंग के गुच्छों में लगते है। इसके प्रत्येक फल में 3 बीज होते है।

कृषिकरण

एरंड प्रायः सभी प्रकार की भूमि में उगाई जा सकती है। रेतीली दोमट व भारी दोमट मिट्टी में भी इसे उगाया जा सकता है। सभी प्रकार की जलवायु भी इसके लिए उपयुक्त है। देशी एरंड की अपेक्षाकृत हाईब्रीड बीज इसके लिए उपयुक्त है। एरंड की जड़े भूमि में अंदर तक सीधी गहरी जाती है अतः गहरी गहुआई करना आवश्यक है। जुलाई के अंतिम सप्ताह तक खेत में 2 ट्राली गोबर का खाद डालकर मिलाकर खेत की जुताई कर पाटा चला देते है जिस से खेत में नमी बनी रहे। एरण्ड की बीज की बुआई जून से अगस्त माह तक कभी भी की जा सकती है परन्तु जुलाई के अंतिम सप्ताह में बुआई करना चाहिए। सिंचित क्षेत्र में हाईब्रीड एरण्ड की कतार से कतार 5 फीट एवं पौधे से पौधे की दूरी 2 फीट रखते है।

बीज को 5–8 से.मी. गहराई पर बोते है। एरण्ड का पौधा सूखे में भी सिर्फ वर्षा के पानी से ही काफी अच्छी तरह तैयार हो जाता है परन्तु सिंचाई कर दी जाए तो

उत्पादन अच्छा होता है। एरंड की फसल में एक निराई–गुडाई आवश्यक है इसके बाद खरपतवार उगेगा ही नहीं। एरंड की फसल को कीटों का प्रकोप नहीं होता। एरंड की फसल में तुड़ाई का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। फलों की तुड़ाई एक से अधिक बार करना चाहिए तथा जैसे–जैसे फल पकते जाए उन्हें तोड़ लिया जाए। जब फल हल्के काले रंग के होने लगे तो तुड़ाई कर लेना चाहिए। एरंड में फल आने का न्यूनतम समय 90 दिन का है परन्तु सकड किस्मों में फल आने में 5–6 माह लग जाते है। सिंचित क्षेत्र में यह समय और अधिक लग सकता है। एरण्ड की फसल असिंचित क्षेत्र में 3 से 4 क्विंटल एवं सिंचित क्षेत्र में 15 से 20 क्विंटल प्रति एकड़ प्रतिवर्ष प्राप्त किया जा सकता है।

विनाश विहिन विदोहन

बीज का संग्रहण करते समय 10 प्रतिशत बीज को छोड़कर शेष फलों का संग्रहण करना चाहिए।

उपयोग

★ एरंड के तेल की मालिश करते रहने से शरीर के किसी भी अंग की त्वचा फटने का कष्ट दूर होता है।

★ एरंड के पत्तों के 100 ग्राम काढे में घृतकुमारी का रस 50 ग्राम मिलाकर सुबह–शाम सेवन करने से बवासीर में लाभ होता है।

★ 10 ग्राम एरंड की जड़ को छाछ के साथ पीसकर पिलाने से उल्टी और दस्त में लाभ मिलता है।

अश्वगंधा
Withania somnifera
गुणकारी औषधीय पौधा

प्राकृतिक रूप से उगने वाला व खेती की जाने वाली अश्वगंधा शक्तिवर्धक औषधि मानी जाती है। इसे असगंध व बाराहरकर्णी भी कहते है। इसकी कच्ची जड़ से अश्व जैसी गंध आती है।

कृषिकरण

अश्वगंधा का पौधा झाड़ीदार, 1 से 4 फीट ऊंचा व अनेक शाखाओं में होता हैं। इसके फूल छोटे–छोटे पीला व हरापन लिए होते है जिस पर छोटे–छोटे गोल मटर के दाने के समान पहले हरे फिर पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं। इसके अंदर असंख्य बीज होते हैं। इसकी जड़ 4 से 8 इंच लंबी मटमैली होती हैं।

अश्वगंधा की खेती के लिए बालुई दोमट, हल्की लाल मिट्टी, रेतीली मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6 से 8.5 हो इसके लिए उपयुक्त है। यह एक खरीफ फसल है जिसे 650–750 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्र में अच्छी तरह उत्पादित किया जा सकता है। इसकी खेती सीधे बीजों से की जाती है जिसके लिए 5 किलो बीज प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। भूमि की गहरी जुताई कर दो ट्राली गोबर खाद प्रति एकड़ मिलाया जाता है। भूमि की तैयारी मई–जून माह में ही कर ली जाती है। 5 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ लेकर उन्हे डायथेन एम–45 से 3 ग्राम प्रति कि. की दर पर उपचारित किया जाता है। खेत में भारी वर्षा के बाद उपचारित बीज को छिड़काव विधि से बोया जाता है। नर्सरी में तैयार करके भी पौधों को बोया जा सकता है।

बोने के 15–20 दिन बाद पौधे निकल आते है। इन पौधों को फूल आने से पूर्व विरलीकरण किया जाता है जिससे की 150–200 पौधे प्रति वर्ग मीटर रहे। बीज की बुआई के 160 से 180 दिन बाद तक इसकी कटाई की जाती है। जब इसके फल लाल हो जाने व पत्तियां सूखी हो जाये तो पूरे पौधे को जड़ से उखाड़ लेते है। उखाड़ने के बाद जड़ों के गुच्छे से 1–2 से.मी. ऊपर से तना अलग कर देते है। इन जड़ों को 7–10 से. मी. लंबे टुकड़ों में काटकर उनकी ग्रेडिंग कर देते है। फलों की गहाई कर बीज निकाल लेते है। प्रति एकड़ 3 क्विंटल सूखी जड़े तथा 20 से 30 किलोग्राम बीज प्राप्त होता है।

विनाश विहिन विदोहन

जड़ का संग्रहण पौधों में बीज के परिपक्व होने के बाद ही संग्रहण किया जाना चाहिए ताकी बीज से नया पौधा तैयार किया जा सके।

उपयोग

★ अश्वगंधा के जड़ का 1–3 ग्राम चूर्ण 1 ग्राम शहद व दूध के साथ लेने से दुर्बलता में लाभ मिलता हैं।

★ अश्वगंधा के जड़ का 2–4 ग्राम चूर्ण 250 ग्राम दूध के साथ दिन में दो बार लेने से चक्कर व भ्रम आदि में लाभ मिलता हैं।

★ अश्वगंधा चूर्ण 3–3 ग्राम सुबह–शाम गर्म दूध के साथ लेने से दिल व दिमाग की कमजोरी में लाभ मिलता हैं।

बच
Acorus calamus
गुणकारी औषधीय पौधा

बच का पौधा नदी–नालों के किनारे, दलदली एवं गीली जगहों पर प्राकृतिक रूप से उगता है। औषधीय उपयोग का महत्वपूर्ण पौधा होने के कारण इसकी मांग निरंतर बनी रहती है। यह एक छोटा, नमी वाले स्थलों पर पाया जाने वाला बहुवर्षीय पौधा है जिसमे सुगन्धित तना व जड़ देखे जा सकते है। इसकी पत्तियां नुकीली मोटी होती है। इसके फूल हरापन लिए हुए पीले होते है तथा इसके फल लाल तथा गोल होते हैं। इसके हल्के भूरे या गुलाबी रंग के कंद अंदर से स्पंजी व सफेद रहता हैं।

कृषिकरण

बच की खेती के लिए बालुई दोमट मिट्टी जहां सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था हो अथवा जहां पानी भरा रहता हो, अधिक उपयुक्त है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था न हो वहां बच की खेती नहीं करनी चाहिए। जिन क्षेत्रों का तापमान 10^0 से 38^0 सेल्सियस हो एवं वार्षिक वर्षा 70 से.मी. से 250 से.मी. तक हो वह क्षेत्र बच की खेती के लिए उपयुक्त रहते है। बच की खेती के लिए इसके प्रकंद को लगाया जाता है। बच के पुराने प्रकंद को नमी वाले स्थान पर मिट्टी में दबाकर सुरक्षित रखते है। बच की खेती के लिए वर्षा से पूर्व भूमि की दो–तीन बार अच्छी तरह जुताई कर लेनी चाहिए। रोपाई से पहले धान की फसल की तैयारी की तरह ही भूमि की तैयारी करते है। भूमि को थोड़ा दलदली बना लिया जाए तो ज्यादा अच्छा रहता है। बच के प्रकंद को बरसात शुरू होते ही जून–जुलाई में लगाते है। बच के प्रकंद में नए अंकुरण होने पर इन प्रकंद को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर इनका रोपण करते हैं। प्रकंद के

टुकड़ों को तैयार की गई भूमि में 30–30 से.मी. के अंतराल पर 4 से.मी. गहरे बरसात शुरू होने के पहले जून माह अथवा बरसात होने पर लगा देते है। इस प्रकार एक एकड़ में लगभग 45000 पौधे लगते हैं। यदि भूमि गीली एवं दलदली नहीं हो तो रोपाई के तुरन्त बार आवश्यक रूप से पानी देना चाहिए। बच की वृद्धि दर बहुत अच्छी होती है, दूसरे दिन से ही पौधों में वृद्धि दिखाई पड़ने लगती है। 8–9 माह बाद मार्च–अप्रैल माह में जब बच के पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है व सूखने लगती है तब इसके पौधों को जड़ समेत जमीन से खोद कर निकाल लेते है। यदि खेती बड़े स्तर पर की जा रही हो तो हल चलाकर भी निकाल सकते हैं। पत्तियों को प्रकंद से काटकर अलग कर लेते है। एक एकड़ क्षेत्र से सूखे प्रकंद के रूप में लगभग 16 क्वि. बच की उपज प्राप्त हो जाती है।

विनाश विहिन विदोहन

जब मई–जून में पत्तियां पीली पड़ने लगे, कंद का संग्रहण करें। कंद के अग्र भाग काटकर मिट्टी में दबा दे। इससे अगले वर्ष पुनः नया पौधा उत्पन्न हो जाएगा।

उपयोग

★ बच का 4 ग्राम चूर्ण खाकर ऊपर से दूध पीने से दिमाग को शक्ति मिलती हैं।

★ बच के कंद का एक चुटकी चूर्ण रोज शहद के साथ लेने से दस्त, पेट में मरोड, भूख न लगना ठीक होता हैं।

बहेड़ा
Terminalia bellirica
गुणकारी औषधीय पौधो

बहेड़ा को विभीतक, अक्ष एवं कर्षफल भी कहा जाता है। बहेड़ा त्रिफला चूर्ण का तीसरा घटक है। छत्तीसगढ़ में बहेड़ा का वृक्ष लगभग सभी जगह पाया जाता है।

कृषिकरण

बहेड़ा का वृक्ष 18 से 30 मीटर तक ऊंचे होते है। इसकी छाल लगभग 2 से. मी. मोटी होती है। इसके पत्ते बरगद के पत्तों के समान होते है। इसका फूल बहुत छोटा होता है। बहेड़ा का फल अण्डे के आकार का गोल 3 से.मी. तक लंबा होता है। औषधि के रूप में इसके फल के छिलके का उपयोग किया जाता है।

बहेड़ा का प्रजनन–प्रसार बीज अथवा ट्रांसप्लांट पौधों द्वारा किया जाता है। लगभग 176 से 420 बीज प्रति कि.ग्रा. में आते है तथा लगभग 8.5 से 10.5 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर ट्रांसप्लांट पौधों को तैयार करने में लगता है। ये बीज जुताई किए मदर बेड में बो दिए जाते है। लगभग 30 दिन में अंकुरण प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है। जुताई में एक वर्ष की आयु के पौधों को 45x45 से. मी. आकार व 2x2 मी. के अंतराल पर मिश्रित प्रजाति के वृक्षों के साथ रोपित कर दिया जाता है। नियमित निराई–गुड़ाई तथा उर्वरक प्रदाय से लगभग 5 साल की देखभाल से ये पौधे 3 से 4.5 मी. ऊंचाई प्राप्त कर लेते है। बीज द्वारा प्रसार छिड़काव पद्धति से किया जाता है।

विनाश विहिन विदोहन

दिसम्बर–जनवरी माह में जब फल पककर पीले रंग के हो जाए तब संग्रहण करना चाहिए।

उपयोग

- ★ बहेड़ा के छिलके का चूर्ण 3 से 6 ग्राम की मात्रा में लेने से भूख बढ़ती है।
- ★ बहेड़ा चूर्ण के नियमित सेवन से कफ दूर होता है एवं बालों की सफेदी दूर होती है।
- ★ बहेड़ा चूर्ण खून की खराबी, पेट के कीड़ों को नष्ट करता है।

भृंगराज
Eclipta prostrata
गुणकारी औषधीय पौधा

भृंगराज को भोंगरा, भेंगरा, केशराज जैसे कई नाम से जानते हैं। यह औषधि बालों को काला करने के कारण प्रसिद्ध है। छत्तीसगढ़ में वर्षा ऋतु में यह प्राकृतिक तौर पर बहुतायत में पाया जाता हैं। यह पौधा जमीन पर फैलता है। नमी वाले स्थलों पर यह साल के 12 महीने उगते हैं। इसकी पत्तियां अरहर के पत्तों की तरह लोमयुक्त और कर्कश होती है। इसके फूल में एक छोटी सी घुंडी लगती हैं। फूल भृंगराज के प्रकार के अनुसार सफेद, पीले और नीले रंग का होता है। इसकी पंखुड़ियां पुष्ट होने पर छोटे दाने काले जीरे की तरह बाहर आते हैं।

कृषिकरण

यह एक सख्त फसल है तथा विभिन्न प्रकार की भूमि पर होती है। लाल दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम है। इस फसल को बीज एवं कटिंग दोनों तरीके से लगाया जा सकता है। भृंगराज के बीजों को 6 से.मी. कतार में बोया जाता है तथा इसके ऊपर बहुत पतली मिट्टी खाद की परत बिछाई जाती है। स्प्रिंकलर अथवा झारे से इसमें पानी दिया जाता है। बीजों की बुआई के डेढ़–दो माह पश्चात इन पौधों की प्रिंकिंग खेत में लगाई जाती है। इसमें साप्ताहिक सिंचाई की व्यवस्था कर दी जाती है। इसकी पहली निराई पौधरोपण के 30–35 दिवस पश्चात की जाती है तथा दूसरी खरपतवार की वृद्धि को देखकर की जानी चाहिए। प्रत्येक कटा ईध्तु ड़ाई के बाद निराई करना चाहिए ताकि पौधों के बीच खरपतवार नहीं पनप सके।

इसमें लीफ ब्लाईट तथा गॉल बनने के रोग हो सकते है। इसके लिए फसल 0.2 प्रतिशत मैंकोजेब का छिड़काव किये जाने पर रोग नियंत्रित किया जा सकता है।

फसल लेने के लिए पौधे को जड़ से उखाड़ लिया जाता है। पौधे की जड़ को काटकर अलग कर देते है। ताजा हरी पत्तियों को कभी भी एक जगह इकट्ठा नहीं करना चाहिए ना ही उन्हे बोरे में भरना चाहिए। पौधे को उचित साईज के टुकड़ों में काटकर उनको अच्छी तरह दूर–दूर फैलाकर सुखाना चाहिए। अच्छी तरह सुखाने की क्रिया सबसे महत्वपूर्ण है जिससे इसमें कीटाणु नहीं लगते तथा फसल सड़ती नहीं है। फसल कटाई का सबसे उत्तम समय तब है जब इसके बीज काले होने लगे। बीजों को एकत्र कर उन्हें बीन कर साफ कर सुखा लेते है। औसत रूप से भृंगराज की खेती से एक एकड़ में 2400 कि.ग्रा. सूखे पौधे प्राप्त होते है।

विनाश विहिन विदोहन

फूल निकलने के पश्चात् पौधा पूर्णतः परिपक्व हो जाता है। इस अवस्था में संग्रहण किया जाना चाहिए। 10 प्रतिशत पौधों को छोड़ शेष पौधों का संग्रहण करना चाहिए।

उपयोग

- ★ गंजापन, बालों का झड़ना व बालों की सफेदी में भृंगराज के पत्तों का रस से मालिश करने से लाभमिलता है।
- ★ भृंगराज का तेल लगाने से बालों के कई रोगों में लाभ मिलता है।

ब्राह्मी
Bacopa monnieri
गुणकारी औषधीय पौधा

ब्राह्मी एक महत्वपूर्ण बुद्धिवर्धक औषधीय पौधा है। स्मरणशक्ति बढ़ाने हेतु बनने वाली अनेकों औषधियां इससे निर्मित की जाती है। ब्राह्मी एक वर्षीय जमीन पर फैलने वाला पौधा है जो कभी–कभी दो–तीन वर्षों तक भी रहता है। इसका पौधा फैलने वाला मांसल तथा चिकनी पत्तियां लिए होता हैं। पत्तियां चौथाई से एक इंच लंबी व 10 मिलीमीटर तक चौड़ी होती है।

कृषिकरण

ब्राह्मी मुख्यतया रेतीली दोमट, रेतीली हल्की काली कपासिया मिट्टी में अच्छी फैलती है। वैसे यह आर्द्र जलवायु वाले व ठंड वाले क्षेत्रों में उपयुक्त रहती है। यह अधिक नमी वाले क्षेत्र में उत्पन्न होने वाला पौधा है, अतः इस पौधे को नमी बनाएं रखने हेतु अधिक पानी की आवश्यकता रहती है। इसे अधिकतर तलाइयों अथवा नालों के किनारे पर लगाया जा सकता है। ब्राह्मी की खेती इसकी पूर्णतया विकसित शाखाओं द्वारा की जाती है। इसे लगाने के लिए प्रति एकड़ 200 कि.ग्रा. अथवा 12000 नंग गीली शाखाओं की आवश्यकता होगी। पौधों की 5 से 6 इंच लम्बी कटिंग्स जिसमें कुछ पत्तियां, नोड्स व जड़े हो, को खेत में पानी देने के उपरांत 40 से.मी. की दूरी पर लगा देना चाहिए और इसके बाद बहाव से पानी देना चाहिए।

सम्पूर्ण फसल 5 से 6 माह में तैयार हो जाती है। आगे के कृषिकरण हेतु अच्छे पौधों को छोड़कर बाकी पौधों को उखाड़कर धोकर छाया में सुखा लेते हैं। 10 दिन में पूरे पौधे सूख जाते है। अगर इसी फसल से 2 फसल लेनी है तो इस फसल को उखाड़ने के स्थान पर 4 से 5 इंच ऊपर से काट लेते है। यही फसल दुबारा तैयार हो

जाती है, और इस प्रकार एक वर्ष में दो फसल प्राप्त की जा सकती है। इसकी खेती माह जून–जुलाई में शुरू की जा सकती है।

विनाश विहिन विदोहन

पत्ती का संग्रहण पुष्पन के बाद करे तथा 10 प्रतिशत भाग को छोड़ शेष भागों का संग्रहण करे।

उपयोग

★ याददाश्त के लिए इसका एक–चौथाई चम्मच चूर्ण शहद या गाय के दूध के साथ 40 दिनों तक लेने से लाभ मिलता है।

★ नींद नहीं आने पर ब्राह्मी के सूखे पत्तों का चूर्ण 3 ग्राम गाय के दूध के साथ दिया जाता है जिससे लाभ प्राप्त होता है।

★ कुष्ठ में आधा चम्मच चूर्ण थोड़े से पहाड़ी नमक के साथ दिन में एक बार महीनों तक लेने से लाभमि लता है।

★ ब्राह्मी के पौधे का रस मिसरी के साथ पानी में लेने से स्मरणशक्ति बढ़ती है।

★ मिर्गी के दौरों में ब्राह्मी का रस या चूर्ण शहद के साथ लेने से फायदा करता है।

धतूरा
Datura metel
गुणकारी औषधीय पौधा

धतूरा का पौधा पूरे छत्तीसगढ़ में सुगमता से मिलता है। आमतौर पर यह खेतों के किनारे, जंगलों, गांवों में और शहरों में कही भी उगा हुआ दिख जाता है। धतूरा सफेद, काला, नीला, पीला तथा लाल फूल वाला 5 जातियों का मिलता है।

धतूरा का पौधा 170 से.मी. तक ऊंचा तथा झाड़ीदार होता है। इसका तना व शाखाएं बैंगनी या हल्के काले रंग की होती है। इसके पत्ते मध्यम दिल के आकार के व फूल घंटे के आकार के होते है। इसका फूल बहुरंगी होता है। धतूरा का फल गोल कांटे से युक्त और अधिक बीजों से भरा हुआ रहता है। धतूरा के किसी भी हिस्से को उपयोग पूर्व सावधानी आवश्यक है।

कृषिकरण

धतुरा की खेती के लिए चिकनी दोमट मिट्टी उत्तम है परन्तु यह पौधा किसी भी भूमि में हो सकता है। इस पौधे की अच्छी बढ़त के लिए खुलापन व सूर्य की सीधी रोशनी आवश्यक है। खेत की 2–3 बार अच्छी जुताई कर 10 टन गोबर खाद प्रति हेक्टेयर देना चाहिये। प्रति हेक्टेयर 7–8 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। इसकी नर्सरी में पौध । उगाकर भी रोपण किया जा सकता है। इसके लिए नर्सरी में पौध । तैयार कर 10 से.मी. के लगभग पौधा होने पर तैयार खेत में लगाया जाता है। श्वेत धतूरा के बीज मार्च माह में बोये जाते है व गर्मी की फसल के रूप में लिया जाता है। बीजों को 12 घंटे पानी में भिगोकर उगाने से अंकुरण अच्छा होता है। बीजों का रोपण 1–1 मीटर की दूरी पर किया जाता है।

15 दिनों में बीज का अंकुरण शुरू होता है तथा 1 महीने में अंकुरण पूर्ण रूप से हो जाता है। खेत में धतूरे के पौधे जब 10 से.मी. हो जाये तो निराई–गुड़ाई आवश्यक हो जाती है। इस समय बीज बुआई से उगे पौधे की प्रिंकिंग कर उनकी दूरी लगभग 1 मीटर कर दी जानी चाहिए। कमजोर पौधों को ही निकालना चाहिए। वर्षा नहीं होने पर बीज बोने के बाद एक सप्ताह के अंदर सिंचाई करनी चाहिये। फिर बाद में आवश्यकतानुसार 10–15 दिनों के बाद सिंचाई करनी चाहिये। धतूरे के पौधों की बढ़ोत्तरी जुलाई में होती है तथा इस समय इसकी पत्तियों तथा शाखाओं की कटाई कर ली जाती है। पत्तियों को छाया में सुखाया जाता है। इस प्रकार पहली कटाई जुलाई में व दूसरी अक्टूबर में ली जाती है। पौधे की सबसे ज्यादा वृद्धि जुलाई में होती है। एक हेक्टेयर में धतूरे की फसल में 1200 से 1700 कि.ग्रा. सूखे बीज प्राप्त होते है।

विनाश विहिन विदोहन

10 प्रतिशत पौधों को छोड़कर बीज के परिपक्व होने के पश्चात् ही जड़ का संग्रहण किया जाना चाहिए।

उपयोग

★ धतूरे के पत्ते से बने तेल का लेप करने से चर्म रोगों में बहुत लाभकारी होता है।

★ गठिया के रोगी को धतूरे के पत्तों के तेल से मालिश करने से रोग में आराम देता है।

★ धतूरे के पत्तों का रस मिर्गी के रोगी को तीव्रता के अनुसार देने से राहत मिलती है।

गिलोय
Tinospora cordifolia
गुणकारी ओषधीय पौधा

गिलोय एक बहुवर्षीय मांसल चढ़ने वाली लता है। इसे गुडूची, गुलबेल आदि नामों से भी जाना जाता हैं। नीम के वृक्ष पर चढ़ी गिलोय को सबसे उत्तम माना जाता है।

गिलोय बेल वृक्षों की सहायता से बढ़ती रहती हैं। गिलोय के पत्ते दिल के आकार के पान के पत्तों के समान होते हैं। इन पत्तों का व्यास 2 से 4 इंच होता है तथा ये चिकने होते है। गिलोय के फूल छोटे–छोटे गुच्छों में लगते है जो गर्मी के मौसम में आते हैं। गिलोय के फल मटर के दाने के समान, पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं। इसके बीज मुड़े हुए तिरछे दानों के समान सफेद और चिकने होते हैं।

कृषिकरण

वर्षा ऋतु से पहले इसके तने को काटकर सुखा लेते है। यही काटे हुए तने गिलो या ध्गुडूची के नाम से बाजार में बिकते है। गिलोय का रोपण बीज और कटिंग दोनों से किया जा सकता है। बीजों की अंकुरण क्षमता कम होने से इसे ज्यादातर कटिंग के माध्यम से ही रोपा जाता है। कटिंग से इसके रोपण के लिये 6 से 9 इंच लम्बी कटिंग जिसमें 2 से अधिक नोड्स हो, ली जाती है। इन कटिंग्स को उठे हुए बेड्स (रायस्ड बेड्स) अथवा पोलीथीन की थैली में मृदा, रेत व जैविक खाद का संतुलित मिश्रण भरकर लगा दिया जाता है। इस कटिंग से 8–10 दिनों में जड़ें निकल आती है तथा लगभग 2 से 3 माह में पौधा खेत में लगाने हेतु तैयार हो जाता है। बोने से पूर्व खेत में 2 से 3 बार हल चला कर उस पर पाटा चलाया जाता है, जिससे जमीन एक जैसी तथा भली प्रकार समतल हो जायें।

सामान्यतया वर्षा के प्रारम्भ जून–जुलाई में ही इस पौधे का रोपण किया जाना चाहिये। इसके लिए 30x30x30 से.मी. की गड्ढे खोदकर इसमें जड़युक्त कटिंग को लगाना चाहिये। पौधे से पौधे की दूरी 1x1 मी. रखनी चाहिये। विकसित पौधे को उपर से काट देने के बाद वर्षा में पुनः नये सिरे से बेल बनने लग जाती है। यदि कुछ पौधे नये नहीं बने तो उनकी जगह नये पौधे लगाने चाहिये। पतझड़ में जब इसकी पत्तियां झड़ना शुरू हो जायें तब इस पूरी बेल को जमीन से एक फुट ऊपर हंसिया से काटकर पूरी लता को इकट्ठा कर लिया जाता है। गिलोय के तने की मोटाई 3 से 4 इंच व्यास के बराबर होती है। इसे छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर छाया में सुखा लिया जाता है। इसका तना ही गुड़ची/गिलोय के रूप में बाजार में बिकता है।

विनाश विहिन विदोहन

वनों से संग्रहण करते समय फरवरी अप्रैल में जब तने की मोटाई 2 से. मी. या अंगुठे की मोटाई का हो जाये तथा तने का रंग हरे से मटमैला सफेद रंग का हो जाये तब संग्रहण करना चाहिए।

उपयोग

★ घी के साथ गिलोय का सेवन वातरोग के लिए फायदेमंद है।

★ शहद के साथ गिलोय तना का सेवन करने से कफ की शिकायत दूर होती हैं।

गुड़मार
Gymnema sylvestre
गुणकारी औषधीय पौधा

शक्कर एवं गुड़ के मीठे स्वाद को नष्ट करने वाली औषधि गुड़मार है। इसे मधुनाशिनी के नाम से भी जाना जाता है। गुड़मार का पौधा प्राकृतिक रूप से छत्तीसगढ़ के जंगलों व सामान्य जमीन पर बहुतायत में पाया जाता हैं।

गुड़मार बहुवर्षीय, बहुशाखीय लता है जो दूसरे वृक्षों का सहारा लेकर अपनी बेल चढ़ाती है। इसकी पत्तियां 2 से.मी. से 8 से.मी. लंबी तथा 5 से.मी. तक चौड़ी होती है। इसके फूल पीले रंग के होते हैं। गुड़मार में फूल अगस्त–सितम्बर में तथा फल दिसम्बर–जनवरी में आते हैं।

कृषिकरण

गुड़मार एक बहुवर्षीय लता है। एक बार लगा दिए जाने पर यह लगभग 50 वर्षों तक अच्छी उपज दे सकती है। इसके साथ ही जहां हम जंगलों से वर्ष में एक बार ही फसल प्राप्त करते है। वही कृषिकरण करने पर इसकी दो फसल ली जा सकती है। भूमि तैयारी करते समय 2 ट्राली प्रति एकड़ खाद देना उपयुक्त रहता है। आगे के वर्षों में खाद की आवश्यकता नहीं है। लगाते समय गड्ढ़ों में 10 किलो कम्पोस्ट खाद प्रति पौधा डाल देना चाहिए। मई माह में 50x50x50 से.मी. के गड्ढ़े लाइन से लाइन 5 फीट तथा पौधे से पौधा 3 फीट की दूरी से खुदवा देने चाहिए। गड्ढ़ों को मिट्टी में 10 किलो गोबर की खाद व 500 ग्राम नीम की खली मिलाकर वापस भर देना चाहिए। इस प्रकार एक एकड़ में 3500 गड्ढ़े खुदेंगे।

गुड़मार का बीज बाजार से प्राप्त करने में कठिनाई होती है अतः अच्छा यही रहेगा कि जहां यह पैदा होता है वही के जंगलों से फरवरी–मार्च में इसका बीज इकट्ठा करवा लेना चाहिए। यह कटिंग से भी तैयार किया जा सकता है। इसकी कटिंग्स फरवरी माह में थैलियों में लगाकर पौधे तैयार किए जा सकते है। नर्सरी द्वारा तैयार किए गए पौधों को पूर्व में खोदे गए गड्ढ़ों में अगस्त माह तक लगा देना चाहिए और प्रत्येक पौधे को लगभग 10 ली. पानी दे देना चाहिए। 5x3 की दूरी पर गड्ढ़ों में कुल 3500 पौधे लगेंगे। जंगल में पैदा होने वाली फसल की सिर्फ एक बार ही जुलाई–अगस्त में तुड़ाई होती है परन्तु खेती किए जाने पर सिंचाई की व्यवस्था होने पर दो बार (पहली सितम्बर–अक्टूबर तथा दूसरी अप्रैल–मई में) पत्तों की तुड़ाई की जा सकती है।

विनाश विहिन विदोहन

पत्तिपो का संग्रहण फूल आने के पश्चात् करे एवं 10 प्रतिशत पत्ती को छोड़कर शेष पत्तियों का संग्रहण करे।

उपयोग

★ बुखार और खांसी में गुड़मार जड़ का काढ़ा दिन में दो बार 3 से 5 दिन तक लेने से आराम मिलता है।

★ मधुमेह में गुड़मार की सूखी पत्ती का चूर्ण आधा चम्मच रोज तीन महीने तक पानी के साथ लेने से लाभकरता है।

★ पेट के कीड़ों के लिए गुड़मार की छाल का काढ़ा दो–दो चम्मच दिन में दो बार पीने से असर करता है।

★ गुड़मार के पत्ते पानी में पीसकर प्लेग की गिल्टियों पर लेप करने से गिल्टियां धीरे–धीरे दूर होती है।

हर्रा
Terminalia chebula
गुणकारी औषधीय पौधा

हर्रा को हरड़ व हरीतकी भी कहा जाता है। पूरे छत्तीसगढ़ में हर्रा का वृक्ष पाया जाता है। त्रिफला चूर्ण में हर्रा, आँवला व बहेड़ा के साथ तीसरा प्रमुख घटक है। हर्रा के वृक्ष बड़े व छोटे दो प्रकार के होते है। आमतौर पर हर्रा का वृक्ष 18 से 24 मीटर तक ऊंचा होता है। इसका तना मजबूत, लंबा, सीधा और छाल मटमैली होती है। इसके पत्ते 3 से 8 इंच लंबे व लगभग 2 इंच चौड़े होते है। हर्रा का कच्चा फल हरा व पकने पर पीले धूमिल रंग के हो जाते है। इसके एक फल में एक ही बीज होता है।

कृषिकरण

हर्रा का प्रजनन प्रसार बीज, ट्रांसप्लांट, पौधों, रूट–शूट कटिंग इत्यादि से होता है। इसके लिए बीज को छत्तीस घंटे पानी में डूबोकर गरम उबलते पानी में डालकर अथवा हलकी लकड़ी से पीटकर उपचारित कर रोपण वर्ष से नौ माह पूर्व नर्सरी में मिट्टी की जुताई व गोबर खाद डालकर रेजड बेड्स में बो दिए जाते है। लगभग छह से सात माह के पौधों को निकालकर रूट–शूट कटिंग बनाकर (कॉलर से 3 से 4 से.मी. ऊपर तथा जड़ से 6 से 8 से.मी. में काटकर) पालीबैग पौधों में 1x1x1.5 फीट आकार के गड्ढ़ों में 3x2 मीटर अंतराल पर द्वितीय वर्ष में रोप दिया जाता है। इसकी लगातार निराई–गुड़ाई एवं सुरक्षा करनी चाहिए। वृक्ष को हिलाकर अथवा बाँस की सहायता से पके फलों को तोड़ा जाता है व उन्हें छायादार स्थानों पर सुखाया जाता है। इन्हे बोरों में भरकर संग्रहित किया जाता है।

विनाश विहिन विदोहन

वनों से संग्रहण करते समय दिसम्बर से जनवरी माह में फल पीले रंग के हो जाये तब 10 प्रतिशत फल छोड़कर शेष फल का संग्रहण बाँस की सहायता से किया जाना चाहिए।

उपयोग

★ हर्रा और बहेड़े का चूर्ण शहद के साथ लेने से खाँसी में आराम मिलता है।

★ छोटी हर्रा को पानी में घिसकर छालों पर 3 बार रोज लगाने से मुंह के छाले नष्ट हो जाते है।

★ हर्रा को पीसकर उसमें शहद मिलाकर चाटने से उल्टी आना बंद हो जाती है।

★ हर्रा के चूर्ण को गर्म पानी के साथ खाने से हिचकी मिट जाती है।

★ छोटी हर्रा को भुनकर मुंह में रखने से पेट तथा मुंह के कई रोगों से राहत मिलती है।

★ हर्रा के टुकड़ों को चबाकर खाने से भूख बढ़ती है।

कलिहारी
Gloriosa superba
गुणकारी औषधीय पौधा

कलिहारी एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है जो जनसामान्य में सर्वाधिक अंधविश्वासों का शिकार रहा है। कलिहारी को देश के विभिन्न भागों में झगड़न या लड़र्रत आदि नामों से जाना जाता हैं। कलिहारी एकवर्षीय लता है। मानसून के समय खेतों की मेढ़ों पर जंगल की झाड़ियों में यह पौधा व इसकी लताएं अपने आप ही दिखाई देती हैं। मानसून में इसकी बेल भूमिगत कंद से निकलती है जो प्रायः बेलनाकार अथवा चपटा तथा 7–8 इंच लंबा, लगभग आधा इंच व्यास का होता है। इसके पत्ते चौड़े व नुकीले होते हैं। सितम्बर से अक्टूबर के महीनों में इस पर फूल आते है जो नीचे से पीले और ऊपर से लाल तथा अत्यंत सुंदर होते है। शीत ऋतु में इसकी लता सूख जाती है।

कृषिकरण

कलिहारी के कृषिकरण के लिए भूमि अच्छे जल निकास वाली होनी चाहिए। बालुई दोमट से लेकर पथरीली कंकरीली भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है। रोपण हेतु औसतन 1.5 से 3 टन अथवा 15,000 कंद प्रति एकड़ की आवश्यकता रहती है। कंद से फसल 6 माह में प्राप्त हो जाती है। इतनी अधिक मात्रा में कंद प्राप्त करने के लिए पहले नर्सरी में इसके बीज से पौधे उगाने होंगे। प्रथम वर्ष में केवल कंद ही तैयार हो पाते है। दूसरे वर्ष में इन कंदों को खोदकर 0.1 प्रतिशत फफूंद नाशक घोल से उपचारित करके ही खेत में लगाना चाहिए। प्रथम वर्ष में कोई उपज प्राप्त नहीं होती है। कंदों को 60 से.मी. की दूरी की मेड़ियों पर, कंद से कंद के बीच 45 से. मी. की दूरी पर रखकर 6 इंच–9 इंच गहरा रोपण करना चाहिए। पेड़ों की सूखी

डालियों झाड़ियों को इसकी बेल चढ़ाने हेतु पास में ही लगा देना चाहिए। मध्यम आकार की झाड़ी के बगल में कंद लगाकर इसकी खेती की जा सकती है। वर्षा ऋतु में उगने के कारण वैसे तो सामान्य वर्षा में ही तैयार हो जाता है। इसमे सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है किंतु हल्की कंकरीली जमीन पर फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई की जानी चाहिए। एक हेक्टेयर फसल से 250–300 किलो बीज, 150–200 किलो छिलके व पाँचवे वर्ष में 2.5 से 3 टन सूखे कंद प्राप्त होते है। बहुवर्षीय फसल होने से एक बार रोपित पौधों से 5 वर्षों तक बीजों का उत्पादन किया जा सकता है। अंतिम वर्ष कंद भी खोद लेते है।

विनाश विहिन विदोहन

यह विलुप्तप्रायः प्रजातियों में आती है, इस कारण इसका संग्रहण करते समय विशेष ध्यान देना चाहिए। कंदों को पुनरूत्पादन हेतु छोड़कर ही शेष कंदों का संग्रहण किया जाना चाहिए।

उपयोग

- यह विष वर्ग का पौधा है। इसके उपयोग से पहले चिकित्सक फे सलाह पर लिया जाना चाहिए।
- कलिहारी की जड़, काले धतूरे की जड़ और कुचिला के लेप से भगंदर रोग में लाभ मिलता है।
- बवासीर, कृमि रोग, सूजन आदि में इसकी कंद का चूर्ण शहद के साथ सेवन करना चाहिए।
- कलिहारी की जड़ पानी में पीसकर नाक से देने से सर्प विष में आराम मिलता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी जड़ का सेवन प्रसव पीड़ा कम करने हेतु भी किया जाता है।

केंवाच
Mucuna pruriens
गुणकारी औषधीय पौधा

केंवाच की बेल होती है। यह एक बहुशाखीय रोमयुक्त लता होती है। इसे कौंच, कमाच, खजेहरा व कवाछु जैसे अन्य नामों से भी जाना जाता है। इसके रुँवासे शरीर में लगने से अत्यंत खुजली होती है।

केंवाच एकवर्षीय चक्रारोही लता है। यह गर्म स्थानों पर अधिक पाई जाती है। इसे चढ़ने के लिए सहारा वृक्षों की आवश्यकता होती हैं। इसके पत्ते 6 से 9 इंच लंबे 3 पत्तों में होते है। इसके फूल सेम की तरह बैंगनी रंग के होते हैं। इसकी फली भी सेम के समान होती है। इसकी फलियों पर सूक्ष्म रूँवासे होते है। फलियों के भीतर सेम के बीज की तरह बीज निकलता है। इसकी जड़ लालिमा लिए होती है।

कृषिकरण

कौंच की उष्ण प्रदेशों में अच्छी फसल होती है तथा उसमें उत्पादन एवं गुणवत्ता भी उत्कृष्ट होती है। कौंच का प्रवर्धन सीधा बीज से होता है, जिसे वर्षा ऋतु के पूर्व खेत में बो दिया जाता है। कौंच एक वर्षीय चक्रारोही लता है, जिसे चढ़ने के लिए सहारा वृक्षों की आवश्यकता होती है अतः जहां–जहां आपके खेतों में बड़े वृक्ष है उनके नीचे कुछ कौंच के बीज रोपित कर सकते है। कौंच वर्षा ऋतु की फसल है। यदि पानी बरस रहा हो तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं है। अगर समय पर वर्षा न हो तो हल्की सिंचाई आवश्यकतानुसार करते रहें। एक माह में कौंच की बेल सहारा पेड़ों पर चढ़ जाएगी। अक्टूबर–नवम्बर में इस बेल पर फूल लगने लग जायेंगे व दिसम्बर–जनवरी में फलियां लगनी शुरू हो जाएगी। कौंच की फसल से प्रति एकड़ 6 से 7 क्वि. बीज का उत्पादन मिलता है, व 3 क्वि. जड़े प्राप्त होती है। कौंच के पौधों

के उत्पादन के साथ–साथ सहारा वृक्षों के रूप में भी अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है।

विनाश विहिन विदोहन

फलियों को फरवरी–अप्रैल माह में जब वह भूरे रंग से काले रंग के हो जाये कुछ फलियों को छोड़ शेष फलों का संग्रहण करना चाहिए।

उपयोग

★ केंवाच के बीजों की खीर बनाकर खाने से वात रोग में लाभ करता है।

★ केंवाच के पत्तों को पीसकर घाव पर लेप करने से और पट्टी बांधने से घाव ठीक होता है।

★ केंवाच के बीज और गोखरू के चूर्ण को मिश्री के साथ मिलाकर दूध के साथ उबालकर पीने से शारीरिक शक्ति बढ़ती है।

★ केंवाच के बीजों को पानी में पीसकर दिन में 2 से 3 बार लेप करने से उपदंश रोग में लाभ होता है।

मेहंदी
Lawsonia inermis
गुणकारी औषधीय पौधा

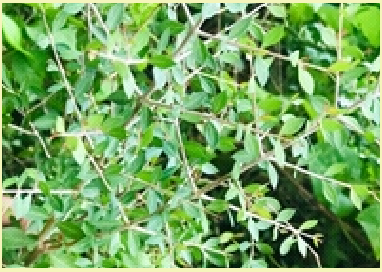

मेहंदी का इस्तेमाल गर्मी में ठंडक देने के लिए किया जाता है। इसे मेन्दी, हिना जैसे नाम से भी जाना जाता है। मेहंदी के पेड़ सदाबहार झाड़ियों के रूप में पाए जाते हैं।

मेहंदी का पेड़ मध्यम आकार का होता है। इसके पत्ते अंडे के जैसे हरे रंग के होते हैं। इसके फूल अत्यधिक सुगंधितो होता है। मेहंदी का फल मटर के समान गोल होता है जिनके भीतर छोटे–छोटे त्रिभुज के आकार के चिकने अनेक बीज होते हैं। इसमें अक्टूबर–नवम्बर में फूल और उसके बाद फल लगते हैं।

कृषिकरण

मेहंदी की खेती सभी प्रकार की भूमि तथा कंकटीली, पथरीली, हलकी, भारी आदि भूमि पर संभव है। यह पौधा उष्ण व शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में सरलता से उगता है। भूमि की 3–4 बार जुताई कर खेत में दीमक से छुटकारा पाने के लिए नीम की खली के चूर्ण 50–60 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से डाले। मेहंदी का प्रवर्धन बीजों एवं कलमों द्वारा होता है। मार्च–अप्रैल में छायादार स्थान पर तैयार नर्सरी के बीजों को छिड़के। एक हेक्टेयर भूमि के लिए 20 कि.ग्रा. बीज की मात्रा पर्याप्त होती है। नर्सरी में समय–समय पर नीम की पत्तियों का घोल का छिड़काव करना चाहिए। जब पौधे की ऊंचाई 40–45 से.मी. तक हो तब उन्हे खेत में सीधी लाइनों में 30 से.मी. की दूरी पर रोपे। फसल रोपण के समय खेत की मिट्टी अच्छी तरह गीली होनी चाहिए। मेहंदी की खेती में सिंचाई नहीं करनी चाहिए। मेहंदी के फसल को किसी प्रकार के कीट नुकसान नहीं पहुंचाते है। माह मार्च–अप्रैल में इसकी प्रथम कटाई

जमीन से लगभग 2–3 इंच ऊपर से करे। अगले वर्षों में प्रत्येक वर्ष दो कटाई करे जिनमे से प्रथम कटाई अक्टूबर–नवम्बर एवं दूसरी कटाई मार्च में करे। कटाई कर इसे छोटी–छोटी ढेरियों में सूखाकर संग्रहित करे। प्रतिवर्ष 15–20 क्विंटल सूखे पत्ते प्रति हेक्टेयर की दर से प्राप्त होते है।

विनाश विहिन विदोहन

पत्तियों का संग्रहण पुष्प तथा फल आने के पश्चात् किया जाना चाहिए। 10 प्रतिशत पत्तियों को छोड़ शेष पत्तियों का संग्रहण किया जाना चाहिए।

उपयोग

★ मेहंदी के पत्तों को मुंह में रखकर चबाने से मुंह के छाले मिट जाते हैं।

★ हथेलियों और पैरों के तलुओं पर मेहंदी लगाने से उच्च रक्तचाप के रोग में लाभ होता है।

★ मेहंदी का तेल लगाने से सिरदर्द के रोगी को राहत मिलती हैं।

★ हाथ–पैरों के फटने पर मेहंदी लगाने से लाभ होता है।

★ मेहंदी के पत्तों को पीसकर लगाने से हाथ–पैरों की ऐंठन में लाभ होता हैं।

★ फोड़े पर मेहंदी के पत्तों को बांधने से फोड़े जल्दी ठीक हो जाते हैं।

नागरमोथा
Cyperus rotundus
गुणकारी औषधीय पौधा

नागरमोथा रोगों को जड़ से समाप्त करता है। नगर के समीप जलीय स्थलों पर उत्पन्न होने के कारण इसे नागर कहते है। इस पौधे का मुख्य उपयोग तेल निकालने में किया जाता है जो बहुउपयोगी औषधि है।

नागरमोथा के झाड़ीनुमा पौधे की लंबाई 30 से 60 से. मी. तक ऊंची होती है। इसके पत्ते लंबे और पतले होते हैं। इसके तने में आधा इंच व्यास के अण्डाकार सुगन्धित बाहर से पीले रंग के परंतु अंदर से सफेद रंग के कंद (फल) होते हैं। नागरमोथा की जड़ में कसेरू की भांति एक कंद निकलता है जिसे नागरमोथा कहते हैं।

कृषिकरण

नागरमोथा की खेती के लिए रेतीली दोमट व मध्यम काली दलदली मिट्टी जरूरी है जिसमें जलधारण क्षमता अधिक होने से इसकी जड़ों का विकास अच्छी तरह से होता है। अनुपजाऊ और बंजर भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है। अप्रैल–मई माह में खेत जोतकर खरपतवार हटा दी जाती है। खेत की 3–4 बार अच्छी तरह जुताई की जानी चाहिये। फिर 6 टन गोबर खाद प्रति एकड़ की दर से खेत में मिलाकर छोड़ देते हैं जिससे धूप अच्छी तरह से लगे व सूक्ष्म जीवाणु नष्ट हो ेलयि। इसकी जड़ों को अलग–अलग कर 15–15 से.मी. की दूरी पर लगा देते है, इस प्रकार एक एकड़ में लगभग 80000 पौधे लग जाते हैं। लगाने के तुरन्त बाद इसकी सिंचाई करना आवश्यक है।

जड़ों के रोपण के 15–20 दिन पश्चात पौध तैयार हो जाती है। जड़ों के विकास के लिए इसमें नमी बनाये रखना जरूरी होता है। इसलिये बरसात के बाद 10–15 दिन के अंतराल में पानी देते रहना चाहिये। डेढ़ वर्ष पश्चात नागरमोथा की जड़ें व्यापारिक रूप से तैयार हो जाती है। अतः अगले वर्ष दिसम्बर–जनवरी में पत्ते पीले पड़ने लगें तो जड़ों को खोदकर निकाला जाता है, इन्हें अच्छी तरह साफ कर, हल्की धूप में सुखाते है। वर्षाकाल के अतिरिक्त इसे पूरे साल कभी भी विदोहन किया जा सकता है। जड़ें जमीन में डेढ़ से तीन इंच तक अंदर रहती है अतः सूखी पत्तियां जलाकर इसे निकाला जाता है। सूखी जड़ों को बिल्कुल साफ करके छोटे–छोटे टुकड़ों में या पाउडर के रूप में परिवर्तित किया जाता है। फिर वाष्प आसवन विधि से गाढ़ा हरे–भूरे रंग का तीव्र सुगंधित तेल निकाल लिया जाता है। एक एकड़ क्षेत्र से लगभग 3000 किलोग्राम जड़े प्राप्त होती है।

विनाश विहिन विदोहन

पत्ते सूखने पर जड़ का संग्रहण किया जाना चाहिए। छोटे कंद को पुनः मिट्टी में दबा देना चाहिए ताकि पौधे का पुर्नरूत्पादन हो सके।

उपयोग

- ★ एक चुटकी नागरमोथा का चूर्ण शहद के साथ प्रयोग से पेट के कीड़े जल्द मरते है।
- ★ नागरमोथा की जड़ों का चूर्ण बनाकर सेवन करने से पेचिश व दस्त में लाभ मिलता है।
- ★ नागरमोथा का काढ़ा पीने से गर्मी से राहत देती है।
- ★ 1 ग्राम नागरमोथा का चूर्ण शहद के साथ सेवन से हिचकी में आराम मिलता है।
- ★ नागरमोथा और गिलोय का काढ़ा बनाकर पीने से बुखार कम होता जाता है।

तुलसी
Ocimum sanctum
गुणकारी औषधीय पौधा

तुलसी में औषधीय गुणों की भरमार है। तुलसी छत्तीसगढ़ में सभी स्थानों पर पाई जाती है। तुलसी पौधे का आध्यात्मिक महत्व भी है। प्रायः लोग इसे घर व मंदिरों के आसपास लगाते है लेकिन जंगलों में यह अपने आप ही उग जाता है।

तुलसी का पौधा झाड़ीदार व सामान्यतया 1 से 4 फीट तक ऊंचा होता है। आमतौर पर तुलसी की पत्तियां हरी व काली तथा गोल लम्बे छोटे–छोटे होते है। इसमें तेज सुगंध होती है। तुलसी के फूल के स्थान पर एक प्रकार की सुगन्धित मंजरी निकलती है। शीतकाल में इसके फूल आते है जो बाद में बीज के रूप में पकते है।

कृषिकरण

तुलसी का पौधा विभिन्न प्रकार की मिट्टियों व विभिन्न जलवायु में आसानी से उगाया जा सकता है। तुलसी की बुआई बीज द्वारा की जाती है। इसे पौधशाला में या क्यारियों में बुआई कर भी तैयार किया जा सकता है। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 600–800 ग्राम बीज पर्याप्त होते है। बीज बुआई के लगभग 30 दिन बाद तुलसी के पौधे मुख्य खेत में रोपाई के योग्य हो जाते है। जब पौधों की ऊंचाई 15–20 से. मी. हो जाये तो पौधों को पहले से तैयार खेत में 60´60 की दूरी पर रोप दिया जाता है। पौधों की बुआई से पूर्व खेत में 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 30 कि.ग्रा. पोटाश की मात्राएं अच्छी प्रकार मिला दे।

फसल की रोपाई के 45 दिन बाद एक निराई के बाद खड़ी फसल में 20 कि. ग्रा. नाइट्रोजन का प्रयोग करना लाभदायक होता है। पौध की रोपाई के तुरन्त बाद खेत को पानी दे ताकि पौधों को पर्याप्त नमी मिल सके। तुलसी के पौधे को दो या तीन सिंचाईयों की ही आवश्यकता पड़ती है। तुलसी की फसल में कीटों का प्रकोप कम ही होता है। तुलसी के फसल को पकने के लिए 65–70 दिन की आवश्यकता होती है। खेत में जब लगभग 80 प्रतिशत से अधिक पौधों पर बल्लरी आ जाये और बल्लरी का रंग हरा न रहकर सुनहरा होने लगे उस समय तुलसी की कटाई करनी चाहिए। तुलसी को कभी भी दूधिया अवस्था पर नहीं काटना चाहिए अन्यथा तेल की उपज कम हो जाती है। तुलसी के एक एकड़ क्षेत्र से एक कटाई में 20–25 कि.ग्रा. तक तेल प्राप्त किया जा सकता है।

विनाश विहिन विदोहन

पत्तियों का संग्रहण पुष्प आने के पश्चात् करें क्योंकि इसी समय पत्तियों में औषधीय रसायन अधिक मात्रा में होते है।

उपयोग

★ तुलसी के 15 पत्ते और 4 काली मिर्च मिलाकर खाने से जुकाम व बुखार से राहत मिलती है।

★ तुलसी के पत्तों को पीसकर माथे पर लेप करने से सिरदर्द में लाभ होता है।

★ तुलसी के पत्ते को पीसकर पानी में मिलाकर चेहरे पर लगाने से झाईयां कम होती है।

Shri Gajendra Kumar Verma is a dedicated forest officer and a passionate nature lover whose professional journey reflects a lifelong commitment to environmental conservation and sustainable resource management. He holds a B.Sc. in *Horticulture* from Indira Gandhi Krishi Vishwavidyalaya, Raipur, and an M.A. in Chhattisgarhi Language from Pandit Sundarlal Sharma University, Bilaspur (C.G.).

Before joining as an Assistant Conservator of Forests (ACF), he served for over twelve years as an Agriculture Extension Officer, gaining extensive field experience and exposure to community-based resource management. His career embodies a strong belief in participatory forestry and people's involvement in conservation and livelihood development.

He is an enthusiastic photographer who captures the harmony between people and nature during his fieldwork. His interests include promoting eco-friendly innovations, sustainable harvesting techniques, and livelihood enhancement through medicinal plant cultivation. Through his work, he continues to inspire collective efforts for the preservation of forests, biodiversity, and traditional knowledge systems.